पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में
दीवानी रिट क्षेत्राधिकार मामला संख्या. 2558/2017

=====

सुनील कुमार सिंह पुत्र श्री प्रभुनाथ सिंह, निवासी गाँव-बिजौली, थाना-पानापुर, जिला-
सारण

..... याचिकाकर्ता/ओं

बनाम

1. बिहार राज्य
2. पुलिस महानिदेशक, पुराना सचिवालय, बिहार, पटना
3. पुलिस अधीक्षक, बेतिया

..... उत्तरदाता/ओं

=====

उपस्थिति:

याचिकाकर्ता/ओं की ओर से : श्री अवधेश कुमार मिश्रा, अधिवक्ता
सुश्री शिवानी मिश्रा, अधिवक्ता
सुश्री प्रगति सिंह, अधिवक्ता
श्री शशांक शेखर, अधिवक्ता

राज्य के अधिवक्ता : श्री मनोज कुमार (एसी से जीपी-4)

=====

भारत का संविधान---अनुच्छेद 226---चयन और नियुक्ति---रिट याचिका दायर करने में विलंब
और लापरवाही---प्रतिवादी प्राधिकारियों को निर्देश देने के लिए रिट याचिका कि वे याचिकाकर्ता
को विज्ञापन संख्या 01/1998 के अनुसरण में आयोजित सभी जांच और परीक्षाओं में सफल
उम्मीदवार होने के आधार पर जिला पुलिस बल में कांस्टेबल के पद पर नियुक्त करें।

मन्तव्य : कांस्टेबल के पद के लिए विज्ञापन वर्ष 1998 में प्रकाशित हुआ था और चयन न होने पर याचिकाकर्ता ने वर्ष 2012 में अभ्यावेदन दायर किया और उसके बाद 2014 में कानूनी नोटिस भेजा और तत्पश्चात वर्ष 2017 में वर्तमान रिट याचिका दायर की ---कार्रवाई के कारण की तिथि से, याचिकाकर्ता ने 19 वर्षों के बाद ही रिट याचिका दायर की है --- ऐसा नहीं है कि न्यायालयों के लिए अनुच्छेद 226 के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग करने के लिए कोई सीमा अवधि है और न ही ऐसा कभी हो सकता है कि एक निश्चित समय बीत जाने के बाद न्यायालय किसी मामले में हस्तक्षेप नहीं कर सकते ----लेकिन न्यायालयों के लिए अनुच्छेद 226 के तहत अपनी असाधारण शक्तियों का प्रयोग करने से इंकार करना विवेक का एक अच्छा और बुद्धिमानी भरा प्रयोग होगा, ऐसे व्यक्तियों के मामले में जो राहत के लिए शीघ्रता से न्यायालय से संपर्क नहीं करते हैं और जो खड़े होकर चीजों को होने देते हैं और फिर पुराने दावों को आगे बढ़ाने और तय मामलों को अस्थिर करने का प्रयास करने के लिए न्यायालय से संपर्क करते हैं ---- न्यायालय--- रिट याचिका खारिज। (पैरा-2, 5)

(1975) 1 एससीसी 152, एआईआर 2009 एससी 264पर भरोसा किया गया।

=====

पटना उच्च न्यायालय का निर्णय आदेश

=====

समक्ष: माननीय न्यायमूर्ति श्री डॉ. अंशुमान

मौखिक निर्णय

दिनांक: 20-03-2025

याचिकाकर्ता और राज्य के लिए विद्वान अधिवक्ता को सुना।

2. वर्तमान रिट याचिका निम्नलिखित राहतों के लिए परमादेश रिट की प्रकृति में दायर की गई है:

1. उत्तरदाता अधिकारियों को निर्देश देने के लिए कि वे याचिकाकर्ता को जिला पुलिस बल, बेतिया में कांस्टेबल के पद पर नियुक्त करें, इस आधार पर कि वह

विज्ञापन संख्या 01/1998 के अनुसरण में आयोजित सभी परीक्षणों और परीक्षाओं में सफल उम्मीदवार है।

॥. किसी भी अन्य राहत के लिए जिसके लिए याचिकाकर्ता हकदार है।

3. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता ने विज्ञापन संख्या 01/1998 के अनुसार जिला पुलिस बल, बेतिया में कांस्टेबल के पद पर परीक्षा प्रक्रिया में भाग लिया था। अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता ने पूरी प्रक्रिया में भाग लिया था, उसकी ऊंचाई 174 सेमी थी और छाती भी उक्त विज्ञापन के अनुसार आवश्यकता से अधिक थी। अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता शारीरिक दक्षता परीक्षा और लिखित परीक्षा में उपस्थित हुआ था, जिसमें उसे सफल घोषित किया गया था। लेकिन, इस तथ्य के बावजूद कि याचिकाकर्ता ने शारीरिक और लिखित परीक्षा में बहुत अच्छा स्थान प्राप्त किया था, उसे नियुक्त नहीं किया गया, जबकि समान स्थिति वाले उम्मीदवारों को नियुक्त किया गया था। इसलिए, याचिकाकर्ता ने 19.03.2012 को पुलिस महानिदेशक, बिहार, पटना (अनुलग्नक-1 के रूप में संलग्न) के समक्ष प्रतिनिधित्व दायर किया। अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि इसके बाद, याचिकाकर्ता ने सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 के तहत आवेदन दायर किया, लेकिन कुछ नहीं हुआ। वकील ने प्रस्तुत किया कि वर्ष 2014 में याचिकाकर्ता ने पुलिस महानिदेशक, बिहार और एसपी, बेतिया को कानूनी नोटिस भेजा था, जिसमें एसपी, बेतिया, पश्चिम चंपारण को कांस्टेबल के पद पर नियुक्त करने का निर्देश देने का अनुरोध किया गया था और अंततः वर्ष 2017 में उन्होंने वर्तमान रिट याचिका दायर की है।

4. दूसरी ओर राज्य के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता द्वारा वर्ष 2012 में अभ्यावेदन दायर किया गया था और वर्तमान रिट याचिका वर्ष 2017 में

दायर की गई है और उक्त विज्ञापन वर्ष 1998 का है। इसका अर्थ यह है कि विज्ञापन की तारीख से लेकर वर्तमान रिट याचिका दायर करने की तारीख तक लगभग 19 वर्ष बीत चुके हैं। इस संबंध में वकील ने **पी. एस. सदाशिवस्वामी बनाम तमिलनाडु राज्य (1975) 1 एससीसी 152** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के एक फैसले का हवाला दिया और प्रस्तुत किया कि इस मामले में रिट याचिका दायर करने में 14 साल की देरी के कारण रिट याचिका को स्वीकार नहीं किया गया। वकील ने आगे **सी. जैकब बनाम भूविज्ञान और खनन निदेशक और अन्य** के मामले में एक फैसले का हवाला दिया। **एआईआर 2009 एससी 264** में रिपोर्ट की गई जिसमें रिट 20 साल बाद दायर की गई थी, और इस बीच, केवल अभ्यावेदन दायर किए गए थे, लेकिन माननीय न्यायालय ने उस पर विचार करने से इनकार कर दिया है।

5. पक्षों की सुनवाई और दस्तावेजों के अवलोकन के बाद, यह इस न्यायालय को पता चला है कि विज्ञापन वर्ष 1998 का है जैसा कि याचिकाकर्ता ने दावा किया है कि चयन न होने पर, उन्होंने वर्ष 2012 में अभ्यावेदन दायर किया है। और उसके बाद, 2014 में एक कानूनी नोटिस भेजा और बाद में, वर्ष 2017 में वर्तमान रिट याचिका दायर की। इसका मतलब है कि, कार्रवाई के कारण की तारीख से, याचिकाकर्ता ने 19 साल बाद ही रिट याचिका दायर की है। **पी.एस. सदाशिवस्वामी (उपरोक्त)** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले के आलोक में, पैराग्राफ नंबर 2 बहुत प्रासंगिक है जो इस प्रकार है: -

“अपीलकर्ता की मुख्य शिकायत यह है कि सहायक अभियंता के रूप में उनसे कनिष्ठ दूसरे प्रतिवादी को 1957 में संभागीय अभियंता के रूप में पदोन्नत किया गया था, संभागीय अभियंता के रूप में पदोन्नति के लिए आवश्यक सेवा अवधि के बारे में प्रासंगिक नियमों में ढील देकर और उस समय इसी तरह की छूट के लिए उनके दावे पर विचार नहीं किया गया

था। मद्रास उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीश जिन्होंने रिट याचिका पर सुनवाई की, उनका विचार था कि अपीलकर्ता के मामले पर विचार किए बिना दूसरे प्रतिवादी के पक्ष में नियमों में ढील मनमाना था। सरकार की ओर से दिए गए इस कथन के मद्देनजर कि ऐसी छूट केवल विदेशी विद्वानों के मामले में दी गई थी, जिस कथन का खंडन नहीं किया गया था, विद्वान न्यायाधीश के दृष्टिकोण से सहमत होना संभव नहीं है। जो भी हो, अगर अपीलकर्ता इससे व्यथित था तो उसे वर्ष 1957 में भी न्यायालय का दरवाजा खटखटाना चाहिए था, जब उसके द्वारा किए गए दो अभ्यावेदन प्रस्तुत करने में विफल रहे थे। कोई नतीजा नहीं निकला। इस मामले पर कोई सो नहीं सकता और वर्ष 1971 में उस छूट पर सवाल उठाते हुए न्यायालय में नहीं आ सकता। एक और तथ्य यह है कि प्रतिवादी 3 और 4 को अपीलकर्ता के ऊपर डिवीजनल इंजीनियर के रूप में पदोन्नत किए जाने के बाद भी वह इस पर सवाल उठाने न्यायालय में नहीं आया। उसके लिए न्यायालय में आने का तीसरा अवसर तब आया जब प्रतिवादी 2 से 4 को फिर से अपीलकर्ता के ऊपर अधीक्षण अभियंता के रूप में पदोन्नत किया गया। चौदह वर्षों के लंबे समय के बाद मुख्य अभियंता पद की आकर्षक संभावना के कारण वह न्यायालय में आया है। वास्तव में कुछ क्रियाएं अपरिवर्तनीय हैं। सरकार के लिए यह विचार करना बहुत कठिन है कि वर्ष 1957 में अपीलकर्ता के पक्ष में नियमों में कोई छूट दी जानी चाहिए थी या नहीं। 1957 में जो स्थितियाँ प्रचलित थीं, उन्हें अब दोहराया नहीं जा सकता। किसी भी मामले में, जैसा कि सरकार ने नीति के तौर पर तय किया था, जैसा कि वे करने के हकदार थे, विदेशी विद्वानों को छोड़कर किसी के पक्ष में नियमों को शिथिल नहीं करना, उन्हें अपीलकर्ता के मामले पर विचार करने का निर्देश देना पूरी तरह से व्यर्थ होगा जैसे कि 1957 के बाद कुछ भी नहीं हुआ था। न केवल प्रतिवादी 2 बल्कि प्रतिवादी 3 और 4

जो अपीलकर्ता के कनिष्ठ थे, 1957 में डिवीजनल इंजीनियर बन गए, जाहिर तौर पर इस आधार पर कि उनकी योग्यता अपीलकर्ता के ऊपर उनकी पदोन्नति के योग्य थी। उन्होंने इस पर सवाल नहीं उठाया। न ही उन्होंने अपने कनिष्ठों को अपने ऊपर अधीक्षण अभियंता के रूप में पदोन्नत करने पर सवाल उठाया। वह इन तीनों अवसरों में से प्रत्येक पर न्यायालय में आ सकते थे। अपने ऊपर कनिष्ठ को पदोन्नत करने के आदेश से व्यथित व्यक्ति को ऐसी पदोन्नति के कम से कम छह महीने या अधिकतम एक वर्ष के भीतर न्यायालय का दरवाजा खटखटाना चाहिए। ऐसा नहीं है कि न्यायालयों के लिए अनुच्छेद 226 के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग करने के लिए कोई सीमा अवधि है और न ही ऐसा कोई मामला हो सकता है जिसमें न्यायालय एक निश्चित समय बीत जाने के बाद किसी मामले में हस्तक्षेप नहीं कर सकते। लेकिन न्यायालयों के लिए अनुच्छेद 226 के तहत अपनी असाधारण शक्तियों का प्रयोग करने से इनकार करना विवेक का एक अच्छा और बुद्धिमानी भरा प्रयोग होगा, ऐसे व्यक्तियों के मामले में जो राहत के लिए शीघ्रता से न्यायालय से संपर्क नहीं करते हैं और जो खड़े होकर चीजों को होने देते हैं और फिर पुराने दावों को आगे बढ़ाने और सुलझाए गए मामलों को अस्थिर करने का प्रयास करने के लिए न्यायालय से संपर्क करते हैं। इसलिए, याचिकाकर्ता की याचिका को समय रहते खारिज कर दिया जाना चाहिए था। ऐसी याचिकाओं पर विचार करना न्यायालय के समय की बर्बादी है। यह न्यायालय के काम को बाधित करता है और वैध शिकायतों पर विचार करने के साथ-साथ उसके सामान्य काम में भी बाधा डालता है। हमारा मानना है कि उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ता की याचिका और अपील को खारिज करके सही किया है।”

सी. जैकब (उपरोक्त) के मामले में भी, जहां याचिकाकर्ता ने कारण बताने की तिथि से 20 वर्ष बाद याचिका दायर की थी, माननीय न्यायालय ने देरी और विलंब के कारण इस पर विचार करने से इनकार कर दिया है।

6. वर्तमान मामले में, इस न्यायालय पता है कि न्यायालय में आने में अत्यधिक देरी हुई है। इसलिए, इस रिट याचिका को खारिज किया जाता है।

(डॉ. अंशुमान, न्यायमूर्ति)

दिव्यांश/-

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।